ट्रिब्यून (चंडीगढ़)
3 JAN 2003

म्यांमार में जनतंत्र बहाली के आसार

म्यांमार को लेकर भारत बड़ी विचित्र स्थिति में है। चीन के साथ-साथ भारत से भी म्यांमार ने इस बीच दोस्ती बढ़ायी है, जबकि भारत जनतंत्र आंदोलन का प्रबल समर्थक रहा है। अक्तूबर 2000 में जब सूकी के संगठन को सैनिक सरकार ने गैर-कानूनी करार दिया, उसके एक महीने बाद नवम्बर में जनरल खिनन्युंत का दिल्ली आगमन पर गर्मजोशी से स्वागत किया गया। मार्च के प्रथम सप्ताह में विदेशमंत्री जसवंत सिंह दक्षिण पूर्व एशिया यात्रा से वापसी में येंगो में रुकते हुए आए।

क शेखर

का, ब्रिटेन व उनके सहयोगी पश्चिमी यिकों को जब इस बात का पक्का यकीन हो कि म्यांमार के सैनिक शासकों को किसी भी ी से झुकाया नहीं जा सकता तो उन देशों ने त राष्ट्र का सहारा लिया और महासचिव कोफी न ने अक्तूबर 2000 में मलेशिया के राजनयिक ी इस्माईल को म्यांमार के लिए अपना विशेष तयुक्त किया । उसी समय से वे दोनों पक्षों में मिलाप की कोशिश में जुटे हैं। लेकिन अभी उल्लेखनीय सफलता नहीं मिल पायी है, न ही भविष्य में ऐसे आसार लग रहे हैं।

न के नक्शे-कदम पर चल रहे म्यांमार के सैनिक देश में जनतंत्र लाने वालों का सफलतापूर्वक कर चुके हैं और विश्व की कोई ताकत उन्हें में कामयाब नहीं हो पा रही है। अंतरराष्ट्रीय स्तर की भर्त्सना का सिलसिला चल-चलकर खत्म हो श्चिमी देश आर्थिक, सैनिक प्रतिबंध लगाने के राजनयिक संबंध खत्म करने जैसे दबाव बनाने सारे हथियारों का इस्तेमाल करके हार थक के बैठ लेकिन म्यांमार ने साबित कर दिया कि उसे इन सब की परवाह नहीं है। अंतरराष्ट्रीय हलके में बिल्कुल -थलग पड़ने की भी उसने फिक्र नहीं की।

सारे दबावों के बावजूद जनतंत्र समर्थकों के फ दमन का शिकंजा लगातार कसता ही चला म्यांमार का एकमात्र शुभचिंतक है निकटतम ी चीन, जो उसका सबसे बड़ा मददगार भी है। न जनतंत्र की आवाज दबाने का प्रयोग पहले ार के जरिए आजमाया, जब 1988 में तत्कालीन सत्ते विन ने चीन की मदद से हजारों छात्रों को ल्ल दिया, देश के प्रतिष्ठित रंगून विश्वविद्यालय ो फौजी छावनी में तबदील कर दिया। उसी के अगले र्ष 19 में चीन ने फिर अपने यहां लगभग उतने ही त्रों की भीड़ को युद्ध में इस्तेमाल होने वाले टैंकों से द दि । वह घटना थ्येन आनमन चौक नरसंहार के म से नी जाती है। विश्व का एकमात्र देश है चीन, सने म्यांमार को एक बार भी आंग सान सूकी को रिहा रने के लिए नहीं कहा और उल्टे म्यांमार से उसके निक रिश्ते प्रगाढ़ होते चले गए हैं।

अक्तूबर 2000 में इस्माईल जब पहली बार येंगो हुंचे तो हैं काफी हील-हुज्जत के बाद आंग सान की से मिलने की इजाजत दी गयी, वो भी सैनिक धिकारियों की मौजूदगी में। उस समय वो रंगून श्वविद्यालय के अहाते में स्थित अपने आवास में जरबंद थे इस्माईल के जाने के तुरन्त बाद सरकारी खबार ने एक रपट छापी, जिसमें सूकी के नेतृत्व वाले वपक्षी गठबंधन एनएलडी (नेशनल लीग फॉर मोक्रेसी) को ही अवैध करार दिया गया और यह भी पित कर दिया गया कि सूकी ब्रिटेन के इशारे पर देश में अव्यवस्था फैलाने की कोशिश कर रही है। विदित हो कि सूकी के पति माइकेल एरिस ब्रितानी थे, जिनकी 1998 में लंदन में ही कैंसर से मौत हो गयी। वो रपट जनतंत्र समर्थकों के साथ ज्यादा सख्त रवैया अपनाने का बहाना था, क्योंकि जो एकाध बाहर थे, वो भी जेल में डाल दिए गए।

गत दिसंबर 2001 में तो इस्माईल को सूकी के आवास के अन्दर ही नहीं जाने दिया गया। वे गेट के बाहर आकर मिलीं। दोनों के बीच सिवाय कुशल क्षेम के आदान-प्रदान के और कोई बातचीत नहीं हो सकी, क्योंकि सैनिक कानून के अंतर्गत उतनी छूट नहीं थी। मई, 2002 में यूरोपीय संघ के भारी दबाव के बाद आखिरकार सूकी को नज़रबन्दी से मुक्त तो किया गया, लेकिन अभी भी उनकी गतिविधियों पर नियंत्रण है। वे पूर्वानुमति के बिना किसी जनसभा को संबोधित नहीं कर सकतीं, न ही शहर से बाहर जा सकती हैं। सितंबर में संघ का एक प्रतिनिधिमंडल जब म्यांमार पहुंचा तो सारे सैनिक अधिकारी किसी न किसी बहाने मुलाकात टाल गए और प्रतिनिधिमंडल के नेता डेनमार्क के एशियाई मामलों के निदेशक कार्स्टन पेडर्सन जब सूकी से मिलने गए तो सफेदपोश जासूस आसपास मंडरा रहे थे। सैनिक सरकार रिहाई का ऐसा नाटक पहले भी कर चुकी है। जनतांत्रिक अधिकारों की बहाली से संबंधित बातचीत के रास्ते अभी भी बन्द हैं। सूकी को छोड़ बाकी सारे राजनीतिक कैदी जेल में ही हैं। 25 अप्रैल को रिजाली इस्माईल से सरकार के दो शीर्षस्थ अधिकारी मिलेंगे गए और खिनन्युंत मिले थे। बंद कमरे में भेंट हुई लेकिन बाहर आकर कोई कुछ नहीं बोला। सिर्फ इतना संकेत मिला कि आंग सान को मुक्त किया जा सकता है। उस दिन भी इस्माईल को सूकी से मिलने की इजाजत नहीं दी गयी। वे फिर मई में ही कायदे से मिल पाए।

1990 में भारी अंतरराष्ट्रीय दबाव में सैनिक सरकार को चुनाव कराना पड़ा। इस बात की पूरी कोशिश के बावजूद कि जनता सरकारी उम्मीदवारों को ही वोट डाले, परिणाम चुनाव के लिए बने विपक्षी गठबंधन नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी (एनएलडी) के पक्ष में गया और सारे के सारे विपक्षी उम्मीदवार जीत गए। लेकिन बजाय सत्ता विजित पार्टी के हाथों में सौंपने के जनरलों ने पहले तो देश में अराजक स्थिति बताकर सूकी समेत तमाम सांसदों को जेल में डाल दिया और उसके बाद सत्ता में बने रहने के लिए तरह-तरह के पैंतरे देने शुरू किए, जो अभी भी जारी हैं।

उस समय के नंबर वन कमांडर साउ माऊंग ने ने विन द्वारा स्थापित सोशलिस्ट प्रोग्राम पार्टी का सिर्फ नाम बदलकर 'लॉ एंड आर्डर रेस्टोरेसन काउंसिल रख दिया। बाकी व्यवस्था ज्यों की त्यों रखी। उसने यह कहकर पूरे संसार को झांसा दिया कि नए सांसद अनुभवहीन हैं, इसलिए उन्हें अभी शासन चलाना सीखने की जरूरत है। कहा गया कि यह सिर्फ कानून व व्यवस्था बनाए रखने के लिए किया गया है और पहली बार विश्व मंच पर ऐसा देखा गया कि सरकार ने शासन चलाना सिखाने के लिए नए सांसदों को जेल में डाल दिया और 12 वर्षों में भी वो यह गुर सीख नहीं पाए।

फिर थोड़े दिनों बाद खिनन्युंत ने नया नामकरण किया और उसे सैनिक जुनटा घोषित करके अपने को सचिव (प्रथम) बताया। न्युंत ने साउ माऊंग की इस व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं किया कि बर्मा को म्यांमार के नाम से और राजधानी रंगून को येंगो के नाम से जाना जाएगा। ऐसा परंपरावादी बहुसंख्यक बौद्धों को झुनझुना पकड़ाने के लिए किया गया। कंबोडिया में भी 1990 के दशक में वियतनाम समर्थित प्रधानमंत्री हुन सेन ने राजकुमार सिंहनुक की भावनाओं का ख्याल करके कहा था कि अब 'कंपूचिया' नाम नहीं रहेगा और मूल नाम 'कंबोडिया' ही बरकरार रहेगा।

म्यांमार में सैनिक शासन की बुनियाद रखने वाले ने विन ने अपने पूरे शासन काल में ऐसे प्रयोग कई बार आजमाए। उन्होंने अपनी पार्टी का नाम रखा 'बर्मा सोशलिस्ट प्रोग्राम पार्टी' और वे समय-समय पर चुनाव भी कराते, जिसकी कोई निर्धारित अवधि नहीं थी। लेकिन मतदाताओं के पास दूसरा विकल्प नहीं होता था। मार्क्स और बुद्ध की दुहाई देकर ने विन ने 'एक व्यक्ति एक पार्टी' का सिद्धांत स्थापित किया, जिसमें जनतांत्रिक अधिकारों का कोई स्थान नहीं था। 1962 से 1988 तक उन्होंने अधिकारों की आवाज बंदूक से दबा दी। 1962 में ने विन ने सूकी के पिता आंग सान को साजिश करके मरवा दिया था, जिन्होंने देश को आजादी दिलाने के लिए अंग्रेजों से टक्कर ली थी और जनता उन्हें चाहती थी।

अंग्रेजों के जमाने में रंगून को सजा के रूप में इस्तेमाल किया जाता था, लेकिन आज भी कमोबेश यही स्थिति है, जिसकी छाप भारत-म्यांमार संबंध पर रही है, क्योंकि भारत म्यांमार का ऐसा पड़ोसी है जो जनतंत्र के लिए दुनिया के सामने एक मिसाल है।

भारत के अंतिम बादशाह बहादुर शाह जफर को अंग्रेजों ने रंगून भेज दिया था और बर्मा के अंतिम सम्राट थेबाउ की मौत निर्वासन में भारत (रत्नागिरी) में हुई। जिस ने विन की आबाद की हुई जमीन पर उनके अनुयायी ऐश कर रहे हैं, उसी जमीन पर ने विन के अंतिम दिन बेहद खराब हालत में गुजरे। सूकी के पति की तरह ही मृत्यु के दिन (पांच दिसंबर) ने विन का कोई रिश्तेदार उनके पास नहीं था। सात मार्च को तख्तापलट की असफल कोशिश के कारण उन्हें जेल में डाल दिया गया। पत्नी को अलग जेल में रखा गया। ने विन की मौत की खबर दबा दी गयी। म्यांमार के किसी अखबार में नहीं आयी। रेडियो पर ऐसे बताया गया जैसे किसी ऐरे-गैरे की मौत हो । अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए भी उनके संबंधियों को विदेश से आने की इजाजत नहीं मिली। ऐसी मौत नसीब हुई आज के म्यांमार के जन्मदाता को, जिनसे तख्तापलट के लिए उन अधिकारियों ने कथित रूप से रिश्वत ली जो उनके अधीन काम कर चुके थे और फिर उन्हीं को फंसा भी दिया । इतना ही नहीं, ने विन की लाश को एक घंटे के अंदर दफनाने को महीना भर नहीं गुजरा कि सुप्रीमकोर्ट ने उनके सभी संबंधियों को सजाए-मौत की पुष्टि कर दी जो तख्तापलट की कोशिश के आरोप में सितंबर में सुनायी गयी थी। सरकारी तंत्र का ऐसा अमानवीय पहलू विरले ही देखने को मिलता है।

म्यांमार के शासक सूकी को परेशान करने के लिए क्रूरता की सारी सीमाएं पार कर चुके हैं, जिसने अपनी जिंदगी देश की जनता के नाम कर दी। सान सूकी के पति एरिश कैंसर के मरीज थे, इसलिए वे बच्चों को अपने से दूर रखते थे। 1998 में जब उन्हें लगा कि मौत करीब है तो उन्होंने म्यांमार सरकार से येंगो आने का वीजा मांगा। लेकिन जालिम जनरलों ने इस मानवीय पहलू पर भी द्रवित होने के बजाय इसमें राजनीतिक रंग दे दिया और कहा कि माइकेल एरिश को तो येंगो आने की इजाजत नहीं दी जा सकती, लेकिन सूकी अगर लंदन जाना चाहें तो जा सकती हैं? जनरलों ने सोच रखा था कि इसी बहाने सूकी देश से बाहर निकलेंगी और उन्हें वापस आने नहीं दिया जायेगा। पति-पत्नी की एक-दूसरे को अंतिम बार देख लेने की इच्छा पूरी नहीं हो पायी, एरिश यह आशा संजोए स्वर्ग सिधार गए। 1991 में जब सान सूकी को नोबेल शांति पुरस्कार देने की घोषणा हुई, तब जनरलों ने उन्हें पुरस्कार लेने देश से बाहर नहीं जाने दिया। पुरस्कार उनकी ओर से पति ने ग्रहण किया। दिसंबर 2001 में नोबेल पुरस्कार की 100वीं वर्षगांठ मनाने के लिए ओस्लो में सभी शांति पुरस्कार विजेता जुटे, लेकिन नोबेल अकादमी के निदेशक के बार-बार आग्रह पर भी सूकी को ओस्लो जाने की कौन कहे, जेल से बाहर नहीं निकलने दिया गया।

म्यांमार को लेकर भारत बड़ी विचित्र स्थिति में है। चीन के साथ-साथ भारत से भी म्यांमार ने इस बीच दोस्ती बढ़ायी है, जबकि भारत जनतंत्र आंदोलन का प्रबल समर्थक रहा है। अक्तूबर 2000 में जब सूकी के संगठन को सैनिक सरकार ने गैर-कानूनी करार दिया, उसके एक महीने बाद नवम्बर में जनरल खिन न्युंत का दिल्ली आगमन पर गर्मजोशी से स्वागत किया गया। मार्च के प्रथम सप्ताह में विदेशमंत्री जसवंत सिंह दक्षिण पूर्व एशिया यात्रा से वापसी में येंगो में रुकते हुए आए। पर इसके बावजूद उत्तर-पूर्व के विद्रोहियों को म्यांमार से सैनिक सहायता जारी है।

सैनिक शासन की बर्बरता का आलम यह है कि म्यांमार से भागकर बंगलादेश में 20 वर्षों से शरण लिए हजारों की संख्या में मुसलमान आज भी वापस लौटने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहे हैं। चीन-म्यांमार-बंगलादेश धुरी बनने के बाद अब एक सैनिक अधिकारी ढाका जाने की तैयारी में है।